~

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

सुरक्षित: 21.12.2022
उद्घोषित: 05.01.2023

आप.अ. 273/2009

सुनील ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: सुश्री गायत्री नंदवानी (डीएचसीएलएससी) सह सुश्री मुदिता शारदा, अधिवक्ता

बनाम

राज्य ..... प्रत्यर्थी

द्वारा: श्री नरेश कुमार चाहर, राज्य के लिए अति.लो.अभि. सह उप.नि. संदीप यादव, पु.था. मालवीय नगर

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति सुश्री स्वर्ण कांता शर्मा

<u>निर्णय</u>

<u>न्या. स्वर्ण कांता शर्मा</u>

1. अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (दं.प्र.सं.) की धारा 482 के सहपठित धारा 374 के तहत वर्तमान अपील दायर की गई है, जिसमें सत्र मामला संख्या 124/07, जिसके तहत अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 ("भा.दं.सं.") की धारा 399/402 और आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 25

के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया है, में विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश-01, दक्षिण, पटियाला हाउस कोर्ट, नई दिल्ली द्वारा पारित दिनांक 19.03.2009 के आक्षेपित निर्णय और दिनांक 30.03.2009 के दंडादेश को अपास्त करने की मांग की गई है।

2. जिन तथ्यों के आधार पर वर्तमान प्राथमिकी दर्ज की गई थी, वे हैं कि दिनांक 11-07-2007 को उप निरीक्षक के.सी. कौशिक अन्य कर्मचारियों के साथ जिसमें हेड कॉन्स्टेबल प्रीतम सिंह, कॉन्स्टेबल राम सरन और कॉन्स्टेबल माज अहमद शामिल थे, गश्त ड्यूटी पर थे और बाद में उनके साथ कॉन्स्टेबल देव लगन भी शामिल हो गए। उप.नि. के.सी. कौशिक को एक गुप्त सूचना मिली थी कि एमसीडी/एसीसी पार्क, पंचशील पार्क में 5-6 बदमाश किसी वारदात को अंजाम देने की फिराक में बैठे हैं। इसकी सूचना थानाध्यक्ष, पुलिस थाना मालवीय नगर को टेलीफोन पर दी गई। 4-5 राहगीरों से छापेमारी दल में शामिल होने का अनुरोध किया गया, लेकिन वे शामिल नहीं हुए और अपना नाम-पता बताये बगैर चले गये। इसके बाद, उप.नि. केसी कौशिक छापेमारी टीम के साथ रात करीब 10 बजे एमसीडी/एसीसी पार्क के पास पंचशील पार्क के पास बदरपुर सर्विस लेन पहुंचे। उप.नि. के.सी. कौशिक ने छापेमारी दल को सावधानीपूर्वक दक्षिण पश्चिम कोने में जाने का निर्देश दिया था और हे.कां. प्रीतम सिंह ने अभियुक्त व्यक्तियों की बातचीत सुनी और उन्हें सूचित किया कि पांच अभियुक्त व्यक्ति बैठे थे, जबकि एक के हाथ में एक देशी रिवॉल्वर थी।

उन्होंने आगे खुलासा किया कि वे एक-दूसरे से किसी सभरवाल के गार्ड को बांधने और फिर कोठी में रखा कीमती सामान ले जाने के बारे में बात कर रहे थे। वे यह भी कह रहे थे कि अगर किसी ने शोर मचाया तो वे गोली चला देंगे। इसके बाद, छापेमारी टीम ने अभियुक्तों को घेर लिया, लेकिन वे अलग-अलग दिशा में भागने लगे। ओमकार, सुखपाल, सुनील और सूरज नामक चार अभियुक्तों को काबू कर लिया गया। अभियुक्त सुखपाल के पास से लोड की गई एक देशी रिवाल्वर बरामद की गई। अभियुक्त सुनील के पास से एक बटनदार चाकू बरामद किया गया। अभियुक्त सुनील के पास से एक रैक्सिन बैग भी बरामद किया गया जिसमें 2.5 मीटर लंबी प्लास्टिक की रस्सी और एक काले रंग का कपड़ा था। अभियुक्त ओमकार के पास से एक चाकू बरामद किया गया था, लेकिन पांचवां अभियुक्त फरार हो गया था, जिसे पुलिस गिरफ्तार नहीं कर सकी थी। इसके बाद जांच की गई। आयुध अधिनियम की धारा 25 के सहपठित भा.दं.सं. की धारा 399/402 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप पत्र तैयार किया गया था और उपरोक्त चार अभियुक्तों के खिलाफ आरोप विरचित किए गए थे। आक्षेपित निर्णय के माध्यम से, चार अभियुक्तों को भा.दं.सं. की धारा 399/402 के साथ-साथ आयुध अधिनियम की धारा 25 के तहत दंडनीय अपराध करने के लिए दोषी ठहराया गया था। अभियोजन पक्ष की कहानी के अनुसार, अभियुक्त सूरज के पास से कोई हथियार बरामद नहीं हुआ, हालांकि, उसे आयुध अधिनियम की धारा 25 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था।

3. अभियुक्त/अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि भा.दं.सं. की धारा 399/402 के आदेश के अनुसार, डकैती के अपराध को अंजाम देने के लिए आवश्यक घटक कम से कम पांच या अधिक व्यक्तियों का सहयोजन है, जबकि वर्तमान मामले में, केवल चार व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया था, और पांचवें व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता था। यह भी कहा गया है कि यह पाँचवाँ व्यक्ति कभी नहीं खोजा जा सका और इसलिए, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि विचाराधीन अपराध को अंजाम देने के लिए कोई पाँचवाँ व्यक्ति मौजूद नहीं था। यह भी तर्क दिया गया है कि अभियुक्त व्यक्ति कथित तौर पर किसी सभरवाल के गार्ड को बांधकर उसके घर पर डकैती करने की तैयारी कर रहे थे, हालांकि इसकी कोई जांच नहीं की गई है कि ऐसा कोई व्यक्ति या घर मौजूद है या नहीं। आगे यह तर्क दिया गया है कि विचारण न्यायालय के अभिलेख के अवलोकन से यह भी पता चलता है कि विचारण के दौरान वर्तमान अपीलार्थी सहित अभियुक्त व्यक्तियों को विधिक सहायता प्रदान नहीं की गई थी।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अति.लो.अभि. ने तर्क दिया कि अभियुक्त व्यक्तियों को डकैती करने की तैयारी के लिए सही तरीके से दोषी ठहराया गया है। यह भी कहा गया है कि पांचवें अभियुक्त का नाम प्रकटीकरण बयान में

उल्लिखित है, हालांकि, जब छापेमारी दल मौके पर पहुंचा तो उक्त व्यक्ति भाग गया था।

5. दोनों पक्षकारगण के तर्क सुने जा चुके हैं। मामले के अभिलेखों का भी अवलोकन किया गया है।

6. वर्तमान मामले में, अभियोजन पक्ष का आरोप है कि हेड कॉन्स्टेबल प्रीतम सिंह ने अभियुक्त व्यक्तियों को सभरवाल नाम के व्यक्ति के गार्ड को बांधने के बाद उसके घर पर डकैती की तैयारी करने और साजिश रचते हुए सुना था। हालाँकि, अभिलेख पर मौजूद सामग्री के अवलोकन से पता चलता है कि न तो उस स्थान की पहचान की गई थी जहाँ अभियुक्त व्यक्ति कथित तौर पर अपराध करने की तैयारी कर रहे थे और न ही जाँच के दौरान अभियुक्तों को इसके बारे में बताने के लिए कहा गया था। यह अभियोजन पक्ष के मामले पर गंभीर संदेह पैदा करता है कि क्या ऐसा व्यक्ति या घर वास्तव में मौजूद था या आस-पास में स्थित था या यहां तक कि विचाराधीन अपराध को अंजाम देने के लिए मौजूद था।

7. अभिलेख के अवलोकन से यह भी पता चलता है कि प्राथमिकी में यह उल्लेख किया गया है कि वर्तमान अपीलार्थी सुनील की तलाशी के दौरान, कपड़े के पांच काले मास्क के साथ-साथ 2.5 मीटर की प्लास्टिक की रस्सी भी बरामद की गई थी, हालांकि, जांच अधिकारी की गवाही सहित न्यायालय में जांच किए गए सभी गवाहों की गवाही इस बिंदु पर पूरी तरह से मौन है।

गवाही में यह कहीं भी नहीं कहा गया है कि अपीलार्थी सुनील के पास से रेक्सिन बैग, मास्क और प्लास्टिक की रस्सी बरामद की गई थी। हालांकि बैग, प्लास्टिक की रस्सी और मास्क की जब्ती के संबंध में फर्द मकबूजगी अभिलेख पर है, गवाहों ने न तो इसके बारे में बात की है और न ही उक्त मामले की सामग्री को न्यायालय के समक्ष पेश किया गया है या जांच अधिकारी सहित किसी भी गवाह द्वारा पहचाना गया है। चूंकि इसे न्यायालय के समक्ष पेश नहीं किया गया था और न ही गवाहों में से किसी ने इसके बारे में बात की है, बावजूद इसके कि यह अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ एक महत्वपूर्ण सबूत है, इसने अभियोजन पक्ष के मामले को संदिग्ध बना दिया है। जांच अधिकारी ने अपने बयान या प्राथमिकी में, जहां पूरी कार्यवाही का उल्लेख किया गया है, यह भी स्पष्ट नहीं किया है कि रस्सी की लंबाई 2.5 मीटर कैसे मापी गई थी, जिसका उल्लेख जब्ती ज्ञापन में किया गया है। उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्वान विचारण न्यायालय साक्ष्य की विवेचना करते समय उपरोक्त बातों पर ध्यान देने में विफल रहा।

8. वर्तमान अपील पर निर्णय करते समय न्यायालय ने यह भी टिप्पणी की है कि विद्वान विचारण न्यायालय वर्तमान अभियुक्त/आवेदक को प्रभावी विधिक सहायता प्रदान करने में विफल रहा। विद्वान विचारण न्यायालय के अभिलेख के अवलोकन से पता चलता है कि वर्तमान मामले में कुल पाँच गवाहों से पूछताछ की गई जो पुलिस गवाह थे। इस मामले में किसी भी गवाह की प्रतिपरीक्षा नहीं

की गई है और प्रत्येक गवाह से मुख्य पूछताछ करने के बाद यह उल्लेख किया गया है कि:

अभि.सा1 कॉन्स्टेबल माज अहमद, 1168 एसडी, पुलिस थाना मालवीय नगर, एनडी

12.07.07 को मुझे पीपी शेख सराय थाना मालवीय नगर में कॉन्स्टेबल के रूप में तैनात किया गया था.....

***

अभियुक्त सुनील द्वारा ।

शून्य। अवसर दिया गया। ******

अभि.सा2 हेड कॉन्स्टेबल प्रीतम सिंह, 186 एसडी, थाना बदरपुर, एनडी

12.07.07 को मुझे हेड कॉन्स्टेबल के रूप में पीपी शेख सराय थाना मालवीय नगर में तैनात किया गया। उस दिन, उप.नि. के.सी. कौशिक, कॉन्स्टेबल माज अहमद, कॉन्स्टेबल राम शरन और मैं खुद गश्त ड्यूटी पर थे.....

***

अभियुक्त सुनील द्वारा ।

शून्य। अवसर दिया गया।

******

अभि.सा3 हेड कॉन्स्टेबल चरण सिंह, 1722 एसडी, थाना मालवीय नगर, एनडी

12.07.07 को मुझे पीपी शेख सराय थाना मालवीय नगर में हेड कॉन्स्टेबल के रूप में तैनात किया गया था और रात्रि 12 बजे से प्रातः 8 बजे तक डीओ के रूप में कार्य कर रहा था.....

***

अभियुक्त सुनील के अधिवक्ता द्वारा ।

शून्य। अवसर दिया गया।

******

अभि.सा4 सहा.उप.नि. गोपी चंद, थाना मालवीय नगर, एनडी

दिनांक 11/12.07.07 की मध्यरात्रि को मैं थाना मालवीय नगर में सहा.उप.नि. के पद पर तैनात था। उस दिन यह मामला मेरे सामने लाया गया...

***

अभियुक्त सुनील के अधिवक्ता द्वारा ।

शून्य। अवसर दिया गया।

अभि.सा5 उप.नि. के.सी. कौशिक, थाना अमर कॉलोनी, दिल्ली

12.07.07 को मुझे पीपी शेख सराय थाना मालवीय नगर में जाँ.अ. के रूप में तैनात किया गया था। उस दिन मैं हेड कॉन्स्टेबल प्रीतम सिंह, कॉन्स्टेबल माज अहमद, कॉन्स्टेबल राम शरण के साथ गश्त ड्यूटी पर था...

***

अभियुक्त सुनील द्वारा ।

शून्य। अवसर दिया गया।

******

9. इससे यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान मामले में अभियुक्त व्यक्तियों को गवाहों से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दिया गया था क्योंकि उनका प्रतिनिधित्व उनके अधिवक्ता द्वारा नहीं किया गया था और न ही उन्हें विधिक सहायता अधिवक्ता प्रदान किया गया था। लेकिन दिनांक 03.09.2008 के आदेश में उल्लेख है कि अभियुक्त व्यक्तियों ने विधिक सहायता अधिवक्ता उपलब्ध कराने का अनुरोध किया था। हालाँकि, उससे पहले, इस मामले में सभी पाँच गवाहों से पूछताछ की गई।

10. आदेश पत्र दिनांक 18.02.2008 में केवल यह उल्लेख है कि अभियुक्त के अधिवक्ता अभियुक्त के साथ उपस्थित थे। अधिवक्ता के नाम का उल्लेख नहीं किया गया है और दिलचस्प बात यह है कि उक्त तिथि पर दो महत्वपूर्ण गवाहों यानी अभि.सा.1 कॉन्स्टेबल माज अहमद और अभि.सा.2 हेड कॉन्स्टेबल प्रीतम सिंह से पूछताछ की गई थी। उस दिन दर्ज किए गए साक्ष्य में उनके अधिवक्ता की उपस्थिति का उल्लेख नहीं है, लेकिन यह उल्लेख किया गया है कि अभियुक्त को गवाह (साक्ष्य में "अभियुक्त द्वारा " का उल्लेख है। शून्य। अवसर दिया गया") से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दिया गया था। इस प्रकार, प्रमुख गवाहों की प्रतिपरीक्षा न होने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस दिन कोई भी अधिवक्ता उपस्थित नहीं था क्योंकि यदि अधिवक्ता उपस्थित होता, तो यह अधिवक्ता का कर्तव्य था कि वह महत्वपूर्ण गवाह से प्रतिपरीक्षा करे और यदि उनसे पूछताछ नहीं की गई थी, तो विद्वान विचारण न्यायालय के लिए

अधिवक्ता के नाम और इस तथ्य का उल्लेख करना आवश्यक था कि हालांकि गवाहों को प्रतिपरीक्षा के लिए पेश किया गया था, लेकिन अभियुक्त के अधिवक्ता ने उक्त अवसर का लाभ नहीं उठाया। अभि.सा.-3 हेड कॉन्स्टेबल चरण सिंह और अभि.सा-4 सहा.उप.नि. गोपी चंद की पूछताछ के संबंध में भी यही तथ्य है। कि जिस दिन अभि.सा.-5 जांच अधिकारी से पूछताछ की गई, उस दिन "अभियुक्त अधिवक्ता के साथ उपस्थित" शब्द का भी कोई उल्लेख नहीं है। इसके बाद, आदेश पत्रों में अभि.सा -5 से पूछताछ के दौरान अधिवक्ता की उपस्थिति का उल्लेख नहीं किया गया है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि 03.09.2008 को जब अभियुक्त व्यक्तियों ने अनुरोध किया कि वे वकील को नियुक्त करने में असमर्थ हैं, तो श्री मित्तल को राज्य के खर्च पर अभियुक्त व्यक्तियों के लिए न्यायमित्र के रूप में नियुक्त किया गया था। संक्षेप में, दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत बयान दर्ज करने और दंडादेश पर तर्क सुनने के समय को छोड़कर, न्यायमित्र उस दिन भी मौजूद नहीं थे, जब अंतिम तर्क सुने गए क्योंकि उनकी उपस्थिति दर्ज नहीं की गई है। यह भी उल्लेख नहीं किया गया है कि 07.03.2009 को जब अंतिम तर्क सुने गए तो उन्होंने तर्कों को संबोधित किया था। इस प्रकार, विद्वान न्यायमित्र अंतिम तर्कों के लिए निर्धारित तिथियों पर और उससे पहले भी उपस्थित नहीं थे। दिनांक 04.12.2008 को, जब यह अभिलिखित किया गया कि अभियुक्त व्यक्तियों, जिन्होंने पहले बचाव साक्ष्य प्रस्तुत करने की इच्छा व्यक्त की थी, ने विद्वान न्यायालय के समक्ष कहा कि वे बचाव साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करना चाहते हैं, विद्वान न्यायमित्र उपस्थित नहीं थे।

इस प्रकार, यह एक ऐसा मामला है जहां अभियुक्त विचारण के पूरे प्रभावी चरणों के दौरान बिना प्रतिनिधित्व के और बिना सहायता के रहा।

11. यहां तक कि भारत का संविधान भी अभियुक्तों को कुछ मौलिक अधिकार सुनिश्चित करता है जो विचारण के दौरान मुक्त होते हैं और साथ ही राज्य पर कुछ कर्तव्य भी डालता हैं, जिन्हें यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

अनुच्छेद 21 इस प्रकार है:

> 21. **प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण** — किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

अनुच्छेद 22 इस प्रकार हैः

> 22. **कुछ दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण** - (1) किसी व्यक्ति को जो गिरफ्तार किया गया है, ऐसी गिरफ्तारी के कारणों से यथाशीघ्र अवगत कराए बिना अभिरक्षा में निरुद्ध नहीं रखा जाएगा या अपनी रूचि के विधि व्यवसायी से परामर्श करने और प्रतिरक्षा कराने के अधिकार से वंचित नहीं रखा जाएगा।

अनुच्छेद 39क निम्नानुसार हैः

> **39क. सामान्य न्याय और नि:शुल्क विधिक सहायता-** राज्य यह सुनिशिचित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह

विशिष्टतया, यह सुनिशिचित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से नि:शुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।

12. इसलिए, इस मामले में एक जघन्य अपराध के लिए विचारण जिसमें 10 साल तक की सज़ा हो सकती है, बहुत ही अनौपचारिक तरीके से चलाया गया था। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी/अभियुक्त का बचाव करने के लिए किसी भी अधिवक्ता को नियुक्त करना उचित नहीं समझा, न तो तब जब उसके द्वारा नियुक्त अधिवक्ता विचारण (जो दुर्भाग्य से आदेश पत्रों से स्पष्ट नहीं है) की शुरुआत में उपस्थित नहीं हुआ, न ही जब वह अभियोजन पक्ष के गवाहों के साक्ष्य के अभिलेखन के समय अनुपस्थित था। इसलिए, अभियुक्त को विचारण के किसी भी चरण में सही मायनों में अधिवक्ता की विधिक सहायता नहीं मिली। कहने की जरूरत नहीं है कि अभियुक्त विचारण की पूरी अवधि के दौरान ऐसी विधिक सहायता का हकदार था। जैसा कि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है, न्यायमित्र की नियुक्ति सभी साक्ष्य दर्ज होने के बाद बहुत बाद के चरण में हुई थी और उसके बाद भी, विद्वान न्यायमित्र केवल दो बार उपस्थित हुए थे। यह न्यायालय खेद के साथ टिप्पणी करता है कि अंतिम तर्कों के चरण में भी, वह अपीलार्थी का बचाव करने के लिए उपस्थित नहीं था, जिसे बचाने के लिए उसे राज्य के खर्च पर नियुक्त किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि

गवाहों को झुठलाने और बयान की सत्यता का परीक्षण करने के लिए आपराधिक मामले में किसी भी अभियुक्त से प्रतिपरीक्षा का अधिकार आपराधिक विचारण का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा है।

13. ***करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य,*** *(1994) 3 एससीसी 569* के मामले में, माननीय शीर्ष न्यायालय की संविधान पीठ ने गवाह की प्रतिपरीक्षा के उद्देश्य और महत्व को समझाया। प्रासंगिक टिप्पणियाँ इस प्रकार हैं:

> 278. साक्ष्य अधिनियम की धारा 137 परिभाषित करती है कि प्रतिपरीक्षा का क्या मतलब है और धारा 139 और 145 दस्तावेजों के साथ-साथ मौखिक साक्ष्य के संदर्भ में प्रतिपरीक्षा के तरीके की बात करती है। यह विधि का न्यायशास्त्र है कि प्रतिपरीक्षा एक गवाह द्वारा मुख्य परीक्षा में शपथ पर दिए गए बयान की सत्यता की एक अग्नि परीक्षा है, जिसके उद्देश्य इस प्रकार हैं: -
>
> (1) अपने प्रतिद्वंद्वी के गवाह के साक्ष्य मूल्य को नष्ट या कमजोर करना;
> (2) प्रतिद्वंद्वी पक्ष के गवाह के मुंह से प्रतिपरीक्षा करने वाले वकील के मुवक्किल के पक्ष में तथ्यों को प्राप्त करना;
> (3) उक्त गवाह का असली चेहरा न्यायालय के सामने लाते हुए यह दर्शाना कि गवाह विश्वास के लायक नहीं है;
>
> और प्रतिपरीक्षा के दौरान संबोधित किए जाने वाले प्रश्न उसकी सत्यता का परीक्षण करने के लिए हैं; यह पता लगाने के लिए

कि वह कौन है और जीवन में उसकी स्थिति क्या है; और उसके चरित्र को चोट पहुंचाकर उसकी साख को हिलाना"।

14. ***जयेंद्र विष्णु ठाकुर बनाम महाराष्ट्र राज्य*** *(2009) 7 एससीसी 104* में शीर्ष न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त दृष्टिकोण को दोहराया गया था, जिसमें यह देखा गया था कि:

> 24. किसी गवाह से प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार नैसर्गिक अधिकार होने के अलावा वैधानिक अधिकार भी है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 137 मुख्य परीक्षा, प्रतिपरीक्षा और पुनः परीक्षा का प्रावधान करती है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 138 विरोधी पक्ष को उस गवाह से प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार देती है, जिसकी मुख्य रूप से जांच की गई थी, बशर्ते कि वह कथित प्रभाव के लिए अपनी इच्छा व्यक्त करे। लेकिन निर्विवाद रूप से ऐसा अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। एक अभियुक्त के पास न केवल अपना प्रतिनिधित्व करने का बहुमूल्य अधिकार है, बल्कि उसे इसके बारे में सूचित किए जाने का भी अधिकार है। यदि कोई अपवाद बनाया जाना है, तो कानून को स्पष्ट रूप से ऐसा कहना चाहिए या वही आवश्यक निहितार्थ द्वारा अनुमान लगाने में सक्षम होना चाहिए। प्रत्यर्पण अधिनियम, 1962 जैसे कानून हैं जिनमें राय के साथ-साथ साक्ष्य लेना शामिल नहीं है।"

15. यह न्यायालय यह भी टिप्पणी करता है कि माननीय शीर्ष न्यायालय द्वारा निर्णयों की श्रृंखला में यह निर्धारित किया गया है कि निष्पक्ष विचारण का

अधिकार किसी व्यक्ति के जीवन के अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की भावना में शामिल है। बचाव या प्रतिनिधित्व नहीं किए गए किसी व्यक्ति को प्रभावी विधिक सहायता प्रदान करने का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि उसे आपराधिक मामले में नि:शुल्क, निष्पक्ष और न्यायपूर्ण परीक्षण मिले। ***जाहिरा हबीबुल्लाह शेख (5) बनाम गुजरात राज्य,*** *(2006) 3 एससीसी 374* के मामले में माननीय शीर्ष न्यायालय ने अभियुक्त को निष्पक्ष विचारण की अवधारणा की व्याख्या की है और यह न्याय प्रशासन और मानवाधिकारों के संरक्षण की प्रमुखता के लिए महत्वपूर्ण था। शीर्ष न्यायालय की टिप्पणियाँ इस प्रकार हैं:

> 35. इस न्यायालय ने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि एक आपराधिक मामले में कार्यवाही का निष्कर्ष हमेशा पूरी तरह से पक्षकारगण के हाथों में नहीं छोड़ा जा सकता है, अपराध सार्वजनिक अधिकारों और कर्तव्यों का उल्लंघन और अतिक्रमण है, जो एक पूरे समुदाय को प्रभावित करता है और व्यापक रूप से समाज के लिए हानिकारक है। निष्पक्ष विचारण की अवधारणा अभियुक्त, पीड़ित और समाज के हितों के अंतरंग संबंध पर जोर देती है और यह समुदाय ही है जो राज्य और अभियोजन एजेंसियों के माध्यम से कार्य करता है। समाज के हित को पूरी तरह से तिरस्कार के साथ और अग्राह्य व्यक्ति के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। न्याय प्रशासन में जनता के विश्वास को बनाए रखना न्यायालयों का हमेशा एक सर्वोपरि कर्तव्य माना गया है, जिसे अक्सर 'कानून की महिमा' को साबित करने और बनाए रखने के कर्तव्य के रूप में जाना जाता है। न्याय के समुचित प्रशासन को हमेशा एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखा

गया है, जो किसी विशेष मामले के निर्धारण तक ही सीमित नहीं है, भविष्य में न्यायालय के रूप में कार्य करने की इसकी क्षमता की रक्षा करता है जैसा कि इसके पहले मामले में था। यदि एक आपराधिक न्यायालय को न्याय प्रदान करने में एक प्रभावी साधन बनना है, तो पीठासीन न्यायाधीश को विचारण में भागीदार बनकर एक दर्शक और केवल अभिलेखन यंत्र बनना बंद कर देना चाहिए, जो बुद्धिमत्ता, सक्रिय रुचि का प्रदर्शन करता है और सही निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए आवश्यक सभी प्रासंगिक सामग्रियों को प्राप्त करता है, सच्चाई का पता लगाता है, और पक्षकारों और समुदाय दोनों के लिए निष्पक्षता और न्याय के साथ न्याय करता है। आपराधिक न्याय का प्रशासन करने वाले न्यायालय कार्यवाही के संबंध में हुए कष्टप्रद या दमनकारी आचरण से आंखें नहीं मूंद सकते, भले ही निष्पक्ष और स्वतंत्र निर्णायकों के रूप में न्यायाधीशों के निष्पक्ष नाम और स्थिति को कम करने के जोखिम को छोड़कर एक निष्पक्ष विचारण अभी भी संभव है।

36. विधि के नियम और उचित प्रक्रिया के सिद्धांत मानव अधिकारों के संरक्षण के साथ निकटता से जुड़े हुए हैं। ऐसे अधिकारों की प्रभावी ढंग से रक्षा तभी की जा सकती है जब कोई नागरिक न्यायालयों का सहारा ले। यह स्पष्ट रूप से समझना होगा कि विचारण जिसका उद्देश्य मुख्य रूप से सच्चाई का पता लगाना है, सभी संबंधित व्यक्तियों के लिए निष्पक्ष होना चाहिए। निष्पक्ष विचारण की अवधारणा की कोई विश्लेषणात्मक, सर्वव्यापक या संपूर्ण परिभाषा नहीं हो सकती है, और इसे अंतिम उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अनंत प्रकार की वास्तविक

स्थितियों में निर्धारित किया जाना चाहिए, जैसे कि क्या कुछ ऐसा किया गया या कहा गया जो पहले या विचारण के दौरान निष्पक्षता की गुणवत्ता को उस हद तक वंचित कर दे जिसके परिणामस्वरूप घोर अन्याय हो जाए। यह कहना सही नहीं होगा कि केवल अभियुक्तों के साथ ही निष्पक्ष व्यवहार किया जाना चाहिए, यह बड़े पैमाने पर समाज और पीड़ितों या उनके परिवार के सदस्यों और रिश्तेदारों की जरूरतों को नजरअंदाज करने के बराबर होगा। आपराधिक विचारण में प्रत्येक व्यक्ति को यह अंतर्निहित अधिकार है कि उसके साथ निष्पक्षता से व्यवहार किया जाए। निष्पक्ष विचारण से इंकार करना अभियुक्त के साथ उतना ही अन्याय है जितना पीड़ित और समाज के साथ। निष्पक्ष विचारण का मतलब स्पष्ट रूप से एक निष्पक्ष न्यायाधीश, एक निष्पक्ष अभियोजक के समक्ष विचारण और न्यायिक शांति का माहौल होगा। निष्पक्ष विचारण का मतलब एक ऐसा विचारण है जिसमें अभियुक्तों, गवाहों या जिस कारण से मुकदमा चलाया जा रहा है उसके लिए या उसके खिलाफ पूर्वाग्रह या प्रतिकूल प्रभाव समाप्त हो जाता है। यदि गवाहों को झूठे साक्ष्य देने के लिए धमकाया या मजबूर किया जाता है तो यह भी निष्पक्ष विचारण नहीं होगा। महत्वपूर्ण गवाहों की सुनवाई की विफलता निश्चित रूप से निष्पक्ष विचारण से इनकार है।

37. आपराधिक विचारण, मामले में मुद्दों की न्यायिक जांच है और इसका उद्देश्य किसी ऐसे तथ्य या प्रासंगिक तथ्यों के आधार पर किसी मुद्दे पर एक निर्णय पर पहुंचना है जो मुद्दे में तथ्य की खोज का कारण बन सकता है, और ऐसे तथ्यों का सबूत प्राप्त करना है जिस पर अभियोजन पक्ष और अभियुक्त अपने

अभिवचनों द्वारा पहुंचे हैं; महत्वपूर्ण प्रश्न अभियुक्त का अपराधी या निर्दोष होना है। चूँकि इसका उद्देश्य न्याय प्रदान करना और दोषियों को दोषी ठहराना और निर्दोषों की रक्षा करना है, इसलिए विचारण सत्य की खोज के लिए होना चाहिए, न कि तकनीकी जटिलताओं के बारे में, और ऐसे नियमों के तहत किया जाना चाहिए जो निर्दोषों की रक्षा करेंगे और दोषियों को दंडित करेंगे। आरोप का प्रमाण, जो उचित संदेह से परे होना चाहिए, मौखिक और परिस्थितिजन्य साक्ष्यों की समग्रता के न्यायिक मूल्यांकन पर निर्भर होना चाहिए, न कि अलग-थलग जांच पर।

16. **एम.एच. होसकोट बनाम महाराष्ट्र राज्य**, (1978) 3 एससीसी 544 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार व्यक्त किया था:

"14. एक कैदी, जिसे न्यायालय की प्रक्रिया के माध्यम से अपनी मुक्ति प्राप्त करनी है, उसके लिए निष्पक्ष प्रक्रिया का अन्य घटक वकील की सेवाएं हैं। न्यायिक न्याय, प्रक्रियात्मक पेचीदगियों, कानूनी प्रस्तुतियाँ और साक्ष्य की कड़ी परीक्षा के साथ, पेशेवर विशेषज्ञता पर निर्भर करता है; और कानून के तहत समान न्याय की विफलता ऐसी स्थिति में तय है जहां एक पक्ष के लिए ऐसा सहायक प्रणाली अनुपस्थित है। हमारे न्यायालय, एंग्लो-अमेरिकन मॉडल और हमारी न्यायिक प्रक्रिया द्वारा ढाले गए, जो दयालु विधिक तकनीक द्वारा निर्मित है, जो विधि के तहत समान न्याय के पहियों को चलाने के लिए वकील शक्तियों के सहयोग को प्रेरित करती है। जरूरतमंदों को नि:शुल्क विधिक सेवाएं अंग्रेजी आपराधिक न्याय प्रणाली का हिस्सा है। और येल के

अमेरिकी न्यायविद् प्रो. वेंस ने भी भारत के लिए सार्थक बात कही जब उन्होंने कहा:

> "एक गरीब और अनपढ़ व्यक्ति को कानून के समक्ष एक मजबूत विरोधी के बराबर खड़ा करने का क्या फायदा है अगर उसे यह बताने वाला ही कोई नहीं है कि कानून क्या है? या यह कि न्यायालय उसके लिए अन्य सभी व्यक्तियों के समान शर्तों पर उपलब्ध हैं, जब उसके पास प्रवेश शुल्क का भुगतान करने तक का साधन नहीं है?"

17. इसी तरह, ***मोहम्मद हुसैन बनाम राज्य (रा.रा.क्षे.दि.स.) (2012) 2 एससीसी 584*** में निष्पक्ष विचारण और प्रभावी विधिक सहायता के अधिकार पर माननीय शीर्ष न्यायालय की टिप्पणियों को यहां पुन: प्रस्तुत किया गया है:

> 13. इस प्रकार, यह देखा जाएगा कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी/अभियुक्त की रक्षा के लिए किसी अधिवक्ता को नियुक्त करना उचित नहीं समझा, जब उसके द्वारा नियुक्त अधिवक्ता विचारण की शुरुआत में या अभियोजन पक्ष के गवाहों के साक्ष्य के अभिलेखन के समय उपस्थित नहीं हुआ था। अभियुक्त को किसी भी वास्तविक अर्थ में अधिवक्ता की सहायता नहीं मिली, हालाँकि, विचारण की अवधि के दौरान वह ऐसी सहायता का हकदार था। जैसा कि मैंने पहले ही देखा है, अभिलेख इंगित करता है कि विद्वान अधिवक्ता की नियुक्ति और विचारण के अंतिम चरणों के दौरान उनकी उपस्थिति सक्रिय होने के बजाय औपचारिकता मात्र थी। इस चरण पर इस बात पर गंभीरता से संदेह नहीं किया जा सकता है कि प्रतिपरीक्षा का अधिकार एक

आपराधिक मामले में न केवल तथ्यों पर उसके खिलाफ गवाहों का सामना करने के लिए अभियुक्त के अधिकार में शामिल है, बल्कि इसमें यह साबित करके कि उसकी मुख्य गवाही झूठी और निष्पक्ष थी, गवाह को झुठलाने का अधिकार भी शामिल है।

****

16. मेरे विचार से, प्रत्येक व्यक्ति को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की भावना के तहत सक्षम न्यायालय द्वारा निष्पक्ष विचारण का अधिकार है। बचाव और प्रतिनिधित्व नहीं किए गए अभियुक्त व्यक्तियों को सक्षम विधिक सहायता प्रदान करने का उद्देश्य और लक्ष्य यह देखना है कि अभियुक्त को एक आपराधिक मामले में आरोप से नि:शुल्क और निष्पक्ष, न्यायसंगत और उचित विचारण मिले।

****

24. वर्तमान मामले में, न केवल अभियुक्त को विचारण के दौरान एक अधिवक्ता की सहायता से वंचित किया गया था और अधिवक्ता की ऐसी नियुक्ति, जिसका देर से प्रयास किया था, या तो इतनी अनिश्चित थी या विचारण के इतने करीब थी कि उस संबंध में प्रभावी और पर्याप्त सहायता से इनकार कर दिया गया था। न्यायालय को इस बात पर ध्यान देना चाहिए था कि न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में, मुख्य सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए अभियुक्त के साथ उचित और निष्पक्ष तरीके से व्यवहार किया गया कि अपराध का अभियुक्त एक अधिवक्ता का हकदार है जो उसके बचाव के लिए आवश्यक हो सकता है, साथ ही कानून के तथ्यों के लिए भी। वही मानदंड आर्थिक अपराधों या जहां अपराध कारावास की वास्तविक सजा के साथ दंडनीय

नहीं हैं, लेकिन केवल जुर्माने के साथ दंडनीय हैं, के संबंध में लागू नहीं हो सकता है। तथ्य यह है कि इसमें शामिल अधिकार इस प्रकार का है कि इसे स्वतंत्रता और न्याय के उन मूलभूत सिद्धांतों का उल्लंघन किए बिना नकारा नहीं जा सकता है जो हमारी सभी न्यायिक कार्यवाहियों के आधार पर निहित हैं। अधिवक्ता की आवश्यकता इतनी महत्वपूर्ण और अनिवार्य थी कि अधिवक्ता की प्रभावी नियुक्ति करने में विचारण न्यायालय की विफलता विधि की उचित प्रक्रिया से इनकार थी। यह भी उतना ही सच है कि निष्पक्ष और उचित विचारण का न होना दं.प्र.सं. की धारा 304 के अनिवार्य प्रावधानों के उल्लंघन के कारण न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों का उल्लंघन होगा।

****

42. अपीलार्थी को दोषी ठहराते समय विचारण न्यायालय ने न केवल उन गवाहों के साक्ष्यों पर भरोसा किया, जिनकी प्रतिपरीक्षा हो चुकी है, बल्कि उन गवाहों के सबूतों पर भी भरोसा किया है, जिनकी प्रतिपरीक्षा नहीं हुई थी। आपराधिक विचारण का निष्कर्ष गवाहों की सत्यता या अन्यथा पर निर्भर करता है और इसलिए, यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है। सत्य तक पहुंचने के लिए उसकी सत्यता को परखा जाना चाहिए और इस प्रयोजन से प्रतिपरीक्षा एक अग्नि परीक्षा है। यह मुख्य-परीक्षा में शपथ लेकर एक गवाह द्वारा दिये गये बयान की सत्यता का परीक्षण करती है। इसका उद्देश्य तथ्यों और सामग्रियों को प्राप्त करना है ताकि यह साबित किया जा सके कि गवाह के साक्ष्य खारिज किए जाने के लायक हैं। वर्तमान मामले में अपीलार्थी को इस अधिकार से केवल इसलिए वंचित कर दिया गया क्योंकि वह स्वयं विधि के बारे में

जागरूक नहीं था और उसे अपना बचाव करने के लिए अधिवक्ता वाली सहायता नहीं दी गई थी। अपनी पसंद का अधिवक्ता रखने में गरीबी भी उनके आड़े आ गई..."

18. विधिक सहायता की आवश्यकता और महत्व पर जोर देने वाले निर्णयों की एक श्रंखला होने के बावजूद, वर्तमान मामले में अभियुक्त व्यक्तियों को कोई प्रभावी विधिक सहायता प्रदान नहीं की गई थी। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा आदेश पत्र बहुत ही सामान्य तरीके से लिखे गए थे। ज्यादातर जगहों पर आदेश पत्रों में अधिवक्ता के नाम का उल्लेख नहीं किया गया है। अभिलिखित किए गए किसी भी साक्ष्य में अधिवक्ता के नाम, उपस्थिति या अनुपस्थिति का उल्लेख नहीं किया गया था। समस्या यहीं समाप्त नहीं होती। वर्तमान मामले में डकैती की तैयारी करने के अपराध के लिए मुकदमा चलाया जा रहा था जिसके लिए 10 साल तक की सजा का प्रावधान है। पूरे विचारण के दौरान, विशेषकर अंतिम तर्कों और साक्ष्यों के अभिलेखन के समय, अभियुक्त को कोई विधिक सहायता नहीं दी गई थी। विचारण न्यायालय को स्वयं अपने कर्तव्य का भान होना चाहिए था कि वह एक ऐसे अभियुक्त को प्रभावी विधिक सहायता प्रदान करे जो गरीब और हाशिए पर है और अपना बचाव नहीं कर सकता। न्यायालय किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता के संरक्षक हैं और संविधान के साथ-साथ अभियुक्त के खिलाफ निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करने की अपनी शपथ के प्रति कर्तव्यबद्ध हैं, जो भारतीय संविधान द्वारा निर्धारित संवैधानिक लक्ष्य है।

19. अपनी गरीबी के कारण जो लोग सर्वश्रेष्ठ वकील रखने में विफल रहते हैं, उनकी मदद के लिए विधिक सहायता केंद्र और राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण स्थापित करने के लिए बड़ी मात्रा में धन संवितरित किया जाता है। वकीलों को सूचीबद्ध किया जाता है और उन लोगों का मुकदमा चलाने और बचाव करने के लिए भुगतान किया जाता है जो अपने बचाव के लिए वकील नहीं कर पाते हैं। कहने की जरूरत नहीं है, आपराधिक न्यायालयों में वकील पूर्ण आवश्यकता हैं और विलासिता नहीं हैं।

20. निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार एक मौलिक अधिकार है। यह नेक लक्ष्य उस स्थिति में विफल हो जाएगा जब किसी अपराध का अभियुक्त गरीब व्यक्ति बिना वकील की सहायता के अपना बचाव करने में असमर्थ हो। जैसा कि पहले ही ऊपर बताया जा चुका है, अपराध जितना अधिक गंभीर होगा, उसके संभावित परिणाम भी उतने ही अधिक होंगे। न्यायालय को ***हुसैनारा खातून (4) बनाम बिहार राज्य*** *(1980) 1 एससीसी 98* मामले में माननीय शीर्ष न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखना चाहिए था। किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति के लिए नि:शुल्क विधिक सेवाओं का अधिकार उचित, निष्पक्ष और न्यायपूर्ण प्रक्रिया का आवश्यक घटक है और इसे अनुच्छेद 21 की गारंटी में अंतर्निहित माना गया है। यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस तरह के आदेश के बावजूद, कई बार, जैसा कि वर्तमान मामले में है, उच्चतम न्यायालय के निर्णय के साथ-साथ संवैधानिक आदेश की भी घोर अवहेलना होती है।

21. ***खत्री (2) बनाम बिहार राज्य*** *(1981) 1 एससीसी 627* के मामले में यह माना गया है कि विधिक सहायता महज़ एक झूठा वादा बन जाएगी और यह अपने उद्देश्य में विफल हो जाएगी, यदि इसे किसी गरीब, अज्ञानी और अनपढ़ अभियुक्त व्यक्ति के ऊपर छोड़ दिया जाए कि वह खुद नि:शुल्क विधिक सेवाओं की मांग करे। दंडाधिकारी या सत्र न्यायाधीश, जिसके समक्ष अभियुक्त पेश होता है, अभियुक्त को यह सूचित करने के लिए बाध्य होना चाहिए कि यदि वह गरीबी या कंगाली के कारण अपना वकील रखने में असमर्थ है, तो वह राज्य के खर्च पर नि:शुल्क विधिक सेवाएं प्राप्त करने का हकदार है।

22. वर्तमान मामले में, प्रतिपरीक्षा न होने के परिणामस्वरूप घोर अन्याय हुआ है और न्यायालय को ऐसे संभावित परिणाम से बचना होगा। यह याद रखना होगा कि भारत में, निष्पक्ष और उचित विचारण का नहीं होना, न केवल न्यायिक प्रक्रिया और संवैधानिक आदेश के मौलिक सिद्धांतों का उल्लंघन है, बल्कि दं.प्र.सं. की धारा 304 के अनिवार्य प्रावधानों का भी उल्लंघन है। विधिक अधिवक्ता की सहायता, सार्थक तरीके से, पूरे विचारण के दौरान अनुपस्थित रही। मानवाधिकारों के प्रवर्तन को सुनिश्चित करने में न्यायपालिका की महत्वपूर्ण भूमिका है और इसे देश में गरीबों के लिए व्यावहारिक रूप से न्याय को सुलभ बनाने की दिशा में बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ता है।

23. किसी व्यक्ति के वंचित होने की वास्तविकता को समझना और न्याय में समानता लाने के लिए प्रभावी विधिक सहायता प्रदान करके अन्याय को रोकने

के लिए सक्रिय कदम उठाना सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है। नि:शुल्क एवं निष्पक्ष विचारण की संवैधानिक गारंटी देश के गरीबों के लिए सार्थक बनी रहनी चाहिए और न्यायपालिका को वंचित समूहों के हितों की रक्षा के लिए भी सतर्क रहना होगा।

24. यह एक उत्कृष्ट मामला है जहां आक्षेपित निर्णय पारित करते समय न्याय के किसी भी सिद्धांत का उपयोग नहीं किया था क्योंकि अभियुक्त को विधिक सहायता प्रदान नहीं की गई थी जिसे वह भारत के संविधान के साथ-साथ दं.प्र.सं. के तहत पाने का हकदार था। अभियुक्त को पिछले 15 सालों से विचारण का सामना करना पड़ रहा है। कभी-कभी, हालांकि न्यायाधीश द्वारा निर्णय लिखते समय विचारण से गुजर रहे व्यक्ति की पीड़ा का उल्लेख कागज पर नहीं किया जाता है, लेकिन 15 साल से अधिक समय तक चलने वाला विचारण अपने आप में एक पीड़ा है। किसी आपराधिक विचारण का सामना करने का तनाव किसी मामले में अघोषित सजा है जैसा कि वर्तमान मामले में है।

25. इस मामले के समग्र तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का न्यायिक विवेक अब मामले को वापस भेजने और विद्वान विचारण न्यायालय को फिर से नए सिरे से विचारण करने का निर्देश देने की अनुमति नहीं देता है। इसे ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त को सभी आरोपों से बरी कर दिया जाता है क्योंकि विधिक सहायता अधिवक्ता द्वारा अभियुक्त की सहायता न करने के अलावा विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन के

मामले में कई विसंगतियों और कमियों के मौजूद होने के कारण विचारण अपने आप में दूषित हो गया था।

26. जमानत पत्र, यदि कोई हो, रद्द कर दिया जाता है। प्रतिभू को बर्खास्त किया जाता है।

27. तदनुसार, उपरोक्त शर्तों के संबंध अपील की अनुमति दी जाती है।

28. इस निर्णय की एक प्रति इस न्यायालय के विद्वान महानिबंधक द्वारा दिल्ली के सभी जिला न्यायालयों में परिचालित की जाएगी और आवश्यक कार्रवाई के लिए दिल्ली न्यायिक अकादमी के विद्वान निदेशक (शिक्षाविद) को भी भेजी जाएगी।

न्या., स्वर्ण कांता शर्मा

05 जनवरी, 2023/एनएस

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*